चन्दामामा

माँ-बच्चों का मासिक पत्र

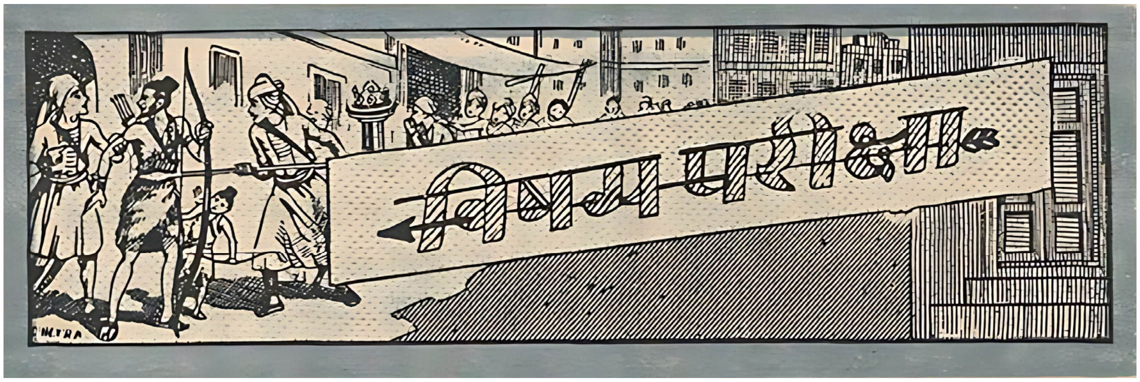

किसी समय गुर्जर देश पर उग्रसेन नाम का राजा राज करता था। उसने राज्य-लोभ से आस-पास के राजाओं पर भी चढ़ाई की और सैन्य-बल से सबको जीत कर अपने अधीन कर लिया। इस प्रकार वह शाहंशाह कहलाने लगा। इतना ही नहीं, उसने अपनी प्रजा को अनेक प्रकार से सताया।

लोग उसका नाम सुनते ही दहल जाते थे। हर शहर में जगह-जगह उसने एक ऊँचे खम्भे पर एक राज-मुकुट रखवा दिया था जिसके ऊपर उसका नाम खुदा हुआ था। उसके साथ यह घोषणा कर दी गई थी कि उस राह से आने-जाने वाले सब लोग उस मुकुट को प्रणाम करके आगे बढ़ें।

स्वतन्त्र प्रकृति के लोग सोचने लगे कि यह तो बड़े अपमान की बात है। लेकिन वे क्या करते ? उस राह से जाने पर उन्हें उस मुकुट को प्रणाम करना ही पड़ता था। धीरे-धीरे प्रजा में असन्तोष की आग दहकने लगी।

उसी समय उस राज के जङ्गलों में 'गण्डा' नाम का एक भील रहता था। तीर चलाने में एकलव्य से भी ज्यादा कुशल था। उसका निशाना कभी चूकता नहीं था। एक दिन वह अपने दस साल के लड़के को साथ लेकर नज़दीक के शहर में गया।

वहाँ उसने देखा कि चौराहे पर खम्भा गड़ा हुआ है; उस खम्भे पर एक मुकुट रखा हुआ है और आने-जाने वाले सब लोग उस मुकुट को प्रणाम करके आगे बढ़ते हैं ! उसने एक आदमी से पूछ कर उसका सारा भेद जान लिया। पर उसने उस मुकुट को प्रणाम नहीं किया। उस ओर देखे बिना ही आगे बढ़ गया।

किंतु वह दस कदम भी नहीं गया होगा कि पहरेदारों ने उसको और उसके लड़के

को पकड़ लिया और गिरफ्तार करके राजा के पास ले गए।

"कौन है तू मौत का मेहमान जो मेरा हुक्म तोड़ने की हिम्मत करता है ? क्या तुझे अपने प्राणों की परवाह नहीं है ?" राजा उग्रसेन ने आँखें लाल करके पूछा। "मेरा नाम गण्डा भील है। मैं जङ्गल में स्वच्छन्द विचरने वाला शेर हूँ। मुझे क्या पड़ी है जो किसी खम्भे पर रखे मुकुट को सलाम करता फिरूँ ?" गण्डा भील ने अकड़ के साथ जवाब दिया।

"अच्छा ! तू ही गण्डा भील है ? हाँ, मैंने भी यह सुना है कि तेरा निशाना कभी नहीं चूकता। अच्छा, ज़रा अपना कौशल तो मुझे दिखा !" यह कह कर बादशाह ने सिपाही को एक अमरूद ले आने का हुक्म दिया।

अमरूद के आते ही राजा ने कहा- "इस भील के लड़के को ले जाकर सामने के पेड़ से बाँध दो और यह अमरूद उसके माथे पर रख दो !"

सिपाहियों ने आज्ञा का पालन किया। फिर राजा ने भील की तरफ मुड़ कर कहा-"देख ! लड़के के सिर पर जो अमरूद रखा हुआ है उस पर निशाना लगाओ। अगर तुमने ठीक अमरूद को छेद दिया तब तो तुम्हारा कसूर माफ हो जाएगा। नहीं तो दोनों के सिर धरती पर लोटने लगेंगे।" राजा की बात सुन कर भील का कलेजा दहलने लगा। उसके माथे पर पसीना आ गया। उसने क्रोध से दाँत पीस कर कहा-"निर्दयी ! अगर कहीं मेरा निशाना चूक गया तो......। भले ही मेरी जान चली जाए, लेकिन मैं तीर नहीं चलाऊँगा अपने बेटे पर !"

तब राजा ने क्रूर भाव से कहा- "क्या सिर बहुत भारी हो गया है ? तब तो इसके

पहले ही तुम्हारे लड़के की जान भी जाएगी। समझ गए !"

यह सुन कर बेचारा भील अवाक् रह गया।

पिता की यह दशा देख कर उसका लड़का चिल्ला उठा-"बापू ! डर काहे का ! तुम्हारा निशाना तो कभी चूकता नहीं। लगाओ निशाना !"

यह सुन कर राजा के मुँह से "वाह-वाह !" निकल गया।

तब भील ने अपनी तरकस से एक पैना तीर निकाला। उस तीर की नोक में ऐसी चमक थी कि देखने वालों की आँखें चौंधिया जाती थीं। भील ने उस तीर की नोक को परखा और उसे अपनी कमर-बन्द में खोंस लिया फिर उसने तरकस से एक और तीर निकाला और निशाना लगा कर अमरूद पर छोड़ दिया। वह तीर सनसनाता हुआ उड़ा और उस फल को छेद कर पेड़ के तने में चुभ गया।

यह देख कर राजा उग्रसेन ने तालियाँ पीटीं और अपने दरबार की ओर इस तरह देखा जैसे कहता हो कि इसके सामने तुम लोग क्या चीज़ हो ?

राजा के मुँह पर व्यङ्ग-भरी मुसकान देख कर उसके दरबारियों ने सोचा-"यह तो हमारी बेइज्जती हो रही है। हम इतने दिन से इसकी खिदमत कर रहे हैं और इसका यह बदला मिल रहा है !"

बादशाह ने भील के लड़के को छोड़ देने का हुक्म दिया और कहा-"तुम लोगों को छोड़ दिया गया। जहाँ चाहो वहाँ जाओ !"

लेकिन भील ने जाते वक्त बादशाह को प्रणाम नहीं किया और न उससे बिदा ही माँगी।

"इसे कितना गरूर है!" बादशाह ने मन में सोचा। लेकिन ऊपर से कुछ नहीं कहा।

इतने में उसकी कमर में खोंसे हुए तीर की तरफ बादशाह का ध्यान गया। तुरन्त उसने भील को रोका।

"अरे ! ज़रा ठहरो तो ! मैं पूछना ही चाहता था कि तू ने जिस तीर को निकाल कर परखा उसे फिर कमर में क्यों खोंस लिया और दूसरा तीर क्यों चढ़ाया ?" बादशाह ने पूछा।

"इसीलिए कि अगर कहीं मेरा हाथ चूक जाता और लड़के की जान चली जाती तो इस तीर से तुम्हारी छाती छेद डालता।" भील ने बेधड़क जवाब दिया।

यह सुनते ही राजा आग-बबूला हो गया। "अरे ! क्या कहा तू ने ? तेरी यह मजाल !" वह क्रोध से चिल्लाया। "तुम लोग खड़े क्या देख रहे हो ? पकड़ लो इस बदमाश को !" उसने अपने सिपाहियों की ओर देखा।

लेकिन भील पहले से तैयार था। बिजली की चाल से उसने अपनी कमर से तीर निकला और पलक मारते राजा पर छोड़ दिया।

तीर राजा की छाती में लगा और छेद कर बाहर निकल गया। राजा धड़ाम से नीचे गिर पड़ा।

यह देख सिपाही-"पकड़ो ! पकड़ो !" कहते हुए भील को और उसके लड़के को घेरने लगे।

लेकिन दरबारियों ने उन्हें रोक कर कहा-"उन पर हाथ उठाया तो खैर नहीं। जाने दो उन्हें !" यह कह कर उन्होंने तलवारें खींच लीं। यह देख कर सिपाही भाग गए।

अत्याचारी राजा को मार कर गण्डा भील ने प्रजा को मुक्त कर दिया। राज्य की सारी प्रजा गण्डा भील की बहादुरी के गीत गाने लगी। जो कल तक विवश होकर खम्भों पर रखे उग्रसेन के मुकुट को प्रणाम किया करते थे, वे अब उल्लास से गण्डा भील को प्रणाम करने लगे।

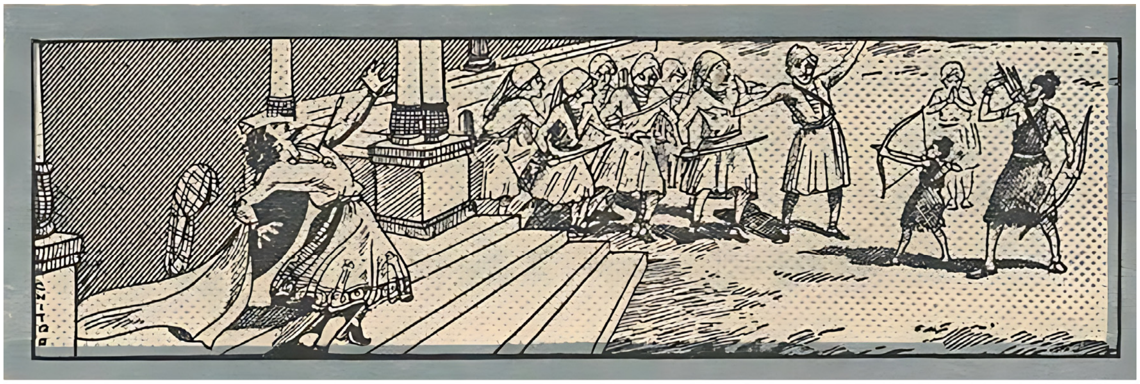

कुएँ में गिरने के बाद उदय एक हफ्ते तक दाढ़ी वाले के रूप में ही रह गया। बाहर निकलने की कोई तदबीर न सूझी। उधर बुकनी के प्रभाव से अद्दश्य बने हुए प्रदोष और निशीथ दाढ़ी वाले के साथ वैसे ही रह गए। क्योंकि जो बुकनी उन्हें पहले का सा रूप दे सकती थी, वह उदय के पास ही रह गई थी।

इधर तो यह हालत थी। उधर राज-कुमारियाँ हफ्ते भर चुपचाप बैठी नहीं रहीं। जुड़वे भाई जो उन्हें हर रोज़ दिखाई देते थे, एक हफ्ते तक नज़र नहीं आए तो उन्होंने सोचा कि वे ज़रूर किसी न किसी सङ्कट में फँस गए होंगे। उन्होंने उनके लिए चारों तरफ ढूँढ़ना शुरू किया। ढूँढ़ते-ढूँढ़ते वे अन्त में उस कुएँ के पास पहुँचीं जिसमें उदय गिरा हुआ था। लेकिन दाढ़ी वाले के नन्हें से रूप में होने के कारण उदय उन्हें दिखाई नहीं दिया। लेकिन उनके कुएँ के पास आने से जो आहट हुई, वह उदय ने सुन ली। उसने कुएँ में से उनको पुकारा। लेकिन उसकी पुकार

कुएँ के ऊपर आते-आते इतनी धीमी हो गई कि उन्हें सुनाई ही न दी।

जब उदय को मालूम हुआ कि राज-कुमारियों को उसकी पुकार सुनाई नहीं पड़ी तो उसे बहुत चिन्ता हुई। लेकिन ऐन मौके पर उसे और एक बात याद आ गई। राक्षस ने उसे कुएँ में गिरा देने के बाद नीचे पड़ी हुई उसकी तलवार भी उठा कर कुएँ में डाल दी थी। उदय ने उस तलवार को ढूँढ निकाला और सारी शक्ति लगा कर कुएँ में से बाहर फेंक दिया। तलवार हवा में सन्नाती हुई आकर बाहर ज़मीन में धँस गई। उदय को आशा थी कि उस तलवार को देख कर राजकुमारियाँ यह पहचान लेंगी कि वह कुएँ में है। लेकिन दुर्भाग्यवश राजकुमारियों ने तलवार को तुरन्त नहीं देखा।

और एक हफ्ते बाद राजकुमारियाँ घूमती-फिरतीं फिर उसी ओर से निकलीं। कुएँ के नज़दीक ही ज़मीन में धँसी हुई तलवार को देख कर उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ। उन्होंने सोचा-"यह कैसी बात है ? पिछली बार जब हम यहाँ आई थीं तो यह तलवार यहाँ नहीं थी। फिर यह अभी यहाँ कैसे आ गई ? कहीं राक्षस ने उदय को मार कर तलवार यहाँ फेंक तो नहीं दी ?" यह सोच कर उन्होंने कुएँ में झाँक कर देखा।

अजीब बात तो यह थी कि कुआँ तरह-तरह के फलों से भर रहा था। उनके ऊपर उदय दाढ़ी वाले के रूप में खड़ा था। उसके हाथ में जादू का तौलिया था। उस तौलिए में से फलों की ढेरियाँ निकल रही थीं और उनसे सारा कुआँ भर रहा था।

राजकुमारियाँ चकित होकर वैसे ही खड़ी देखती रह गईं। थोड़ी देर में फल कुएँ के किनारे तक भर गए। उन फलों

की ढेरी पर खड़ा उदय एक छलाँग मार कर आसानी से बाहर निकल आया। राजकुमारियों की खुशी का ठिकाना न रहा।

इसके बाद उदय ने सारा किस्सा कह सुनाया। कैसे उसने राक्षस का सिर काटा और राक्षस ने कैसे उसे कुएँ में ढकेल दिया, उसके बाद बाहर निकलने के लिए उसने कौन कौन से उपाय किए, ये सब बातें उसने राजकुमारियों को कह सुनाई। सब कुछ सुनने के बाद उन्होंने कहा-"कुछ भी हो ! इस जादू के तौलिए ने तुम्हें बचाया। इसका उपयोग करके कुएँ से बाहर निकलने के लिए तुम्हें जो उपाय सूझा उसकी तो प्रशंसा करनी ही चाहिए।"

इसके बाद वे सब वहाँ से चले और उस जगह पहुँचे जहाँ प्रदोष और निशीथ दाढ़ी वाले के साथ अदृश्य रूप में थे। उदय ने अपनी जेब से बुकनी निकाल कर उन पर छिड़क दी। उन सबको अपना अपना रूप मिल गया।

उदय ने उनको सारा हाल कह सुनाया। सुन कर दाढ़ी वाले ने कहा-"तो वह समझता है कि मैं ही कुएँ में

ढकेल दिया गया। चलो, यह भी अच्छा ही हुआ। अब आगे की बात सोची जाय !" तब उदय ने कहा-"हाँ, यह भी सच है ! लेकिन इस बार जब वह आएगा तो ज़रूर कुएँ में देखेगा तब कुएँ को फलों से भरा देख कर उसे शक होगा। फिर ढूँढ़ने लग जाएगा।"

"उसके आने तक वह कुआँ वहाँ रहेगा तब न ?" दाढ़ी वाले ने कहा।

सब लोग उस कुएँ के पास गए । उदय ने अपनी जेब से बुकनी निकाल कर उस कुएँ पर छिड़क दी। कुआँ छू-मन्तर हो गया और उस जगह चौरस ज़मीन दिखाई देने लगी।

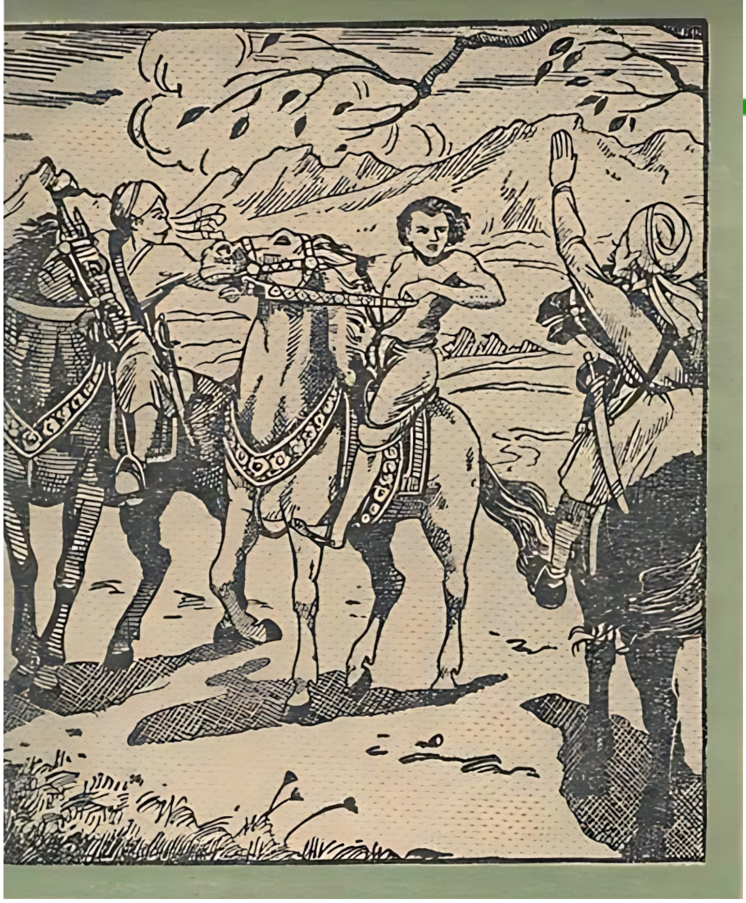

अपने घोड़े को वहाँ छोड़ कर पैदल ही खाई से बाहर हुआ था। फिर उसने कहा-"ऐसे तो तुम्हें वहाँ पहुँचते-पहुँचते बहुन दिन लग जाएँगे। और जाओगे तो तुम्हें वे पहचानेंगे कैसे ? हाँ, घोड़े पर चढ़ कर जाओ तो वे उस घोड़े को पहचान लेंगे और तुम्हारी बातों पर विश्वास करेंगे !"

यह सुन कर दाढ़ी वाला उदय के सफेद घोड़े पर सवार होकर वहाँ से चला।

फिर उदय ने दाढ़ी वाले से कहा-"अच्छा! तुम्हें और एक काम करना होगा। सुनो, राजकुमारियों की खोज में घर से निकले हमें सात बरस हो गए। वहाँ राजा और रानी अब तक सारी आस खो बैठे होंगे। इसलिए तुम इसी दम यहाँ से जाओ और उनसे कहो कि हम सभी कुशल से हैं और कुछ ही दिनों में सानन्द घर पहुँच जाएँगे।"

दाढ़ी वाला 'हाँ' कह कर उसी क्षण वहाँ से चल पड़ा। उदय ने उसको पहले पहल जादू के महल में प्रवेश करने की कहानी कह सुनाई और कहा कि "जब मैं खाई में गिरा तो

यों जाते-जाते एक मैदान में प्रदोष और निशीथ के घोड़ों पर चढ़े हुए महाराज के दो सिपाहियों से उसका सामना हो गया। उन सिपाहियों ने उदय के सफेद घोड़े को देखते ही पहचान लिया। एक अजनबी को उस पर सवार देख कर उन्होंने उसे रोका और पूछा-"कौन हो तुम ? यह घोड़ा तुम्हें कहाँ मिला ? और तुम जा कहाँ रहे हो ?"

दाढ़ी वाले ने जवाब दिया-"मैं महाराज को एक खुशखबरी देने जा रहा हूँ। मैं तुम दोनों के घोड़ों को पहचानता हूँ। क्या तुम लोग महाराज के नौकर नहीं हो ?"

"हाँ ! हाँ ! लेकिन पहले वह खुशखबरी तो सुनाओ जो तुम महाराज के पास ले जा रहे हो ?" सिपाहियों ने पूछा।

"खुशखबरी यही है कि राजकुमारियाँ और उनको खोजने जो जुड़वाँ भाई निकले, वे सभी सकुशल हैं।" दाढ़ी वाले ने कहा। "अच्छा ! ऐसी बात है ! तो चलो, हम भी तुम्हारे साथ लौट चलते हैं।" सिपाहियों ने खुशी के साथ कहा।

"नहीं ! ऐसे नहीं ! चलो ! मैं पहले तुम्हें राजकुमारियों के पास पहुँचा दूँ। तुम लोग वहाँ रह जाना और मैं लौट कर राजा को यह खुश खबरी दे आऊँगा।" दाढ़ी चाले ने कहा।

फिर तीनों मिल कर वहाँ गए जहाँ जुड़वाँ भाई थे। सिपाहियों को वहाँ छोड़ कर दाढ़ी वाला राजा के पास चला।

थोड़ी दूर जाने के बाद एक बवण्डर उठा। यह राक्षस के आने की सूचना थी। यह जान कर दाढ़ी वाले ने घोड़े को ऐंड लगाई और घोड़ा सरपट दौड़ने लगा। लेकिन तब तक राक्षस गिद्ध बन कर उड़ता हुआ आ पहुँचा। उसने एक झपट्टे में दाढ़ी वाले को अपने चंगुल में दबोच लिया और उड़ गया।

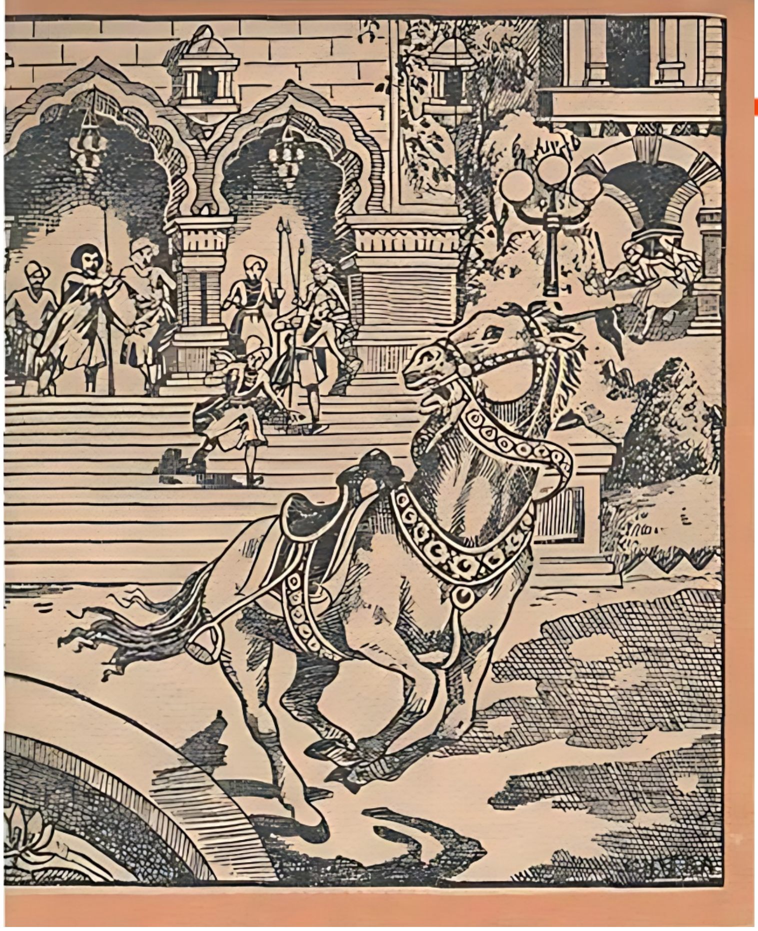

वह घोड़ा इधर-उधर भटकता हुआ एक हफ्ते बाद राजा के महल के पास जा पहुँचा। राजा ने उसे देखते ही पहचान लिया और नौकरों को उसे पकड़ लाने का हुक्म दिया। लेकिन घोड़ा अड़ गया और वहाँ से लौट कर भागने लगा।

नौकर चारों तरफ़ जमा हो गए और उसे घेरने की कोशिश करने लगे। यह देख कर राजा ने उनसे कहा- "कुछ समझ में नहीं आता कि उदय का क्या हाल हुआ और यह घोड़ा यहाँ कैसे आ गया ? इसको देखने से ऐसा मालूम होता है कि इसका स्वामी किसी सङ्कट में फँस गया है। इसीलिए यह यहाँ से भाग जाना चाहता है। इसमें ज़रूर कुछ न कुछ रहस्य छिपा हुआ है। इसलिए तुम लोग इसके पीछे पीछे जाओ और देखो, कहाँ ले जाता है ?"

राजा यों बोल ही रहा था कि घोड़ा वहाँ से भागा। अब राजा के सिपाही उसका पीछा करने लगे। तब घोड़े ने पीछे फिर कर राजा के सिपाहियों को काट खाने की कोशिश की। इससे साफ मालूम होता था कि घोड़े को उनका अपने पीछे-पीछे आना बिलकुल पसन्द नहीं था।

यह देख कर राजा के मन में एक ख्याल पैदा हुआ। उसने मन्त्री को बुला कर कहा-"घोड़ा नहीं चाहता कि ये सब उसके पीछे-पीछे जाएँ। इसलिए उन सब को रोक लो और तुम अकेले इसके पीछे पीछे जाओ।" इस पर सिपाही सभी लौट गए और घोड़ा आगे बढ़ा। अब मन्त्री अकेले उसके पीछे चला।

* * * * * *

इधर जुड़वाँ भाइयों और राजकुमारियों का क्या हाल था, यह भी सुनिए ! दाढ़ी वाले को राजा के पास गए हुए करीब दस दिन हो गए। लेकिन वह अभी

तक लौटा नहीं था। इसलिए जुड़वाँ भाइयों के मन में तरह-तरह के शक होने लगे।

आखिर एक दिन उदय ने अपने भाइयों से कहा-"बेचारा दाढ़ी वाला न जाने किस आफत में फँस गया है ! मैं उसे खोजने जाता हूँ। मेरे आने तक तुम लोग यहाँ सावधान रहो। ज़रूरत पड़ने पर इन बुकनियों का इस्तेनाल करना।" यह कह कर उदय ने उन्हें थोड़ी थोड़ी बुकनियाँ दीं और निशीथ के काले घोड़े पर चढ़ कर दाढ़ी वाले की खोज में निकला।

चलते-चलते उदय एक दूसरे राजा के राज में जा पहुँचा। राह में उसे एक अन्धा मिला जो लाठी टेकता बड़ी मुश्किल से चल रहा था। बगल में ही एक गढ़ा था। अन्धे का पैर फिसल गया और वह उस गढ़े में जा गिरा। झट उदय ने घोड़े से उतर कर उस अन्धे को गढ़े से निकाला और अपनी जेब से अञ्जन निकाल कर उसकी आँखों में लगा दिया। अन्धे को अब साफ दिखाई देने लगा। उसने उदय को अनेक धन्यवाद दिए और उसे अपने घर ले

जाने की कोशिश करने लगा। उदय ने उसकी प्रार्थना मान ली।

बूढ़े के घर पहुँचने पर मालूम हुआ कि उसका लड़का उस नगर के राजा का नौकर था। पिता की आँखें देख कर उसको बेहद खुशी हुई। उसने यह खबर तुरन्त सारे नगर में फैला दी। यहाँ तक कि राजा को भी वह बात मालूम हो गई।

राजा ने सिपाहियों को भेज कर उदय को अपने पास बुलवाया। उदय राजा के दरबार में पहुँचा। राजा ने उसका बहुत आदर-सत्कार किया और कहा-"तुम्हारे जैसा बुद्धिमान आदमी हमारे राज में कोई नहीं है। हमारी

इच्छा है कि तुम हमारे दरबार में रहो !" उदय ने बड़ी नम्रता से जवाब दिया-"महाराज ! मैं आपकी इस कृपा के लिए बहुत एहसानमन्द हूँ। मैं एक ज़रूरी काम पर जा रहा हूँ। वह काम पूरा होते ही मैं आपके दर्शन करूँगा।"

उसकी बात सुन कर राजा बहुत खुश हुआ और उसने अनेक पुरस्कार देकर उसे बिदा कर दिया।

एक हफ्ते तक निर्विघ्न चलते-चलते उदय महाराज के महल के पास जा पहुँचा। उसको देखते ही महाराज ने दौड़ कर उसे छाती से लगा लिया। उदय ने उन्हें राजकुमारियों का कुशल-समाचार सुनाया। उसके बाद जो अजीब-अजीब घटनाएँ घटी थीं, विस्तार के साथ कह कर उसने कहा-"हुजूर ! आप निश्चिन्त रहें ! कुछ ही दिनों में हम राजकुमारियों को सकुशल घर ले आएँगे।" यह सुन कर राजा को बहुत आनन्द हुआ। रानी का मुँह भी खुशी से दमकने लगा। उस नगर के सब लोग यह खबर सुन कर आनन्द से उत्सव मनाने लगे।

दूसरे ही दिन उदय ने राजा से छुट्टी ली और माँ का आशीर्वाद पाकर वहाँ से लौट चला।

और एक हफ्ते बाद उदय फिर वापस आ गया। लेकिन वहाँ पहुँचते ही अपनी आँखों के सामने का दृश्य देख कर उसका हृदय दहल गया। इससे बढ़ कर भयङ्कर दृश्य और क्या हो सकता था ?

उसने देखा कि बाग में एक पेड़ से फाँसी के कई फन्दे लटक रहे हैं। प्रदोष, निशीथ, दाढ़ी वाला और राजा के दोनों सिपाही एक कतार में बैठे हुए हैं। उन सबके हाथ-पैर रस्से से बँधे हुए हैं। उनके सामने ही राक्षस की विकराल आकृति खड़ी हुई है।

[और भी है।]

किसी गरीबिन के तीन लड़के थे। उनके बालपन में ही पिता मर गया था। इसलिए माता को मज़दूरी करके उन लड़कों का पालन-पोषण करना पड़ा।

यों कुछ साल तक काम करते-करते उस औरत की तन्दुरुस्ती खराब हो गई। दवा-दारू कराने के लिए रुपया-पैसा तो उसके पास था नहीं। उपेक्षा करने के कारण बीमारी दिन-दिन बढ़ती गई। अन्त में हालत यहाँ तक आ पहुँची कि वह बेचारी चारपाई से उठ भी नहीं सकती थी।

यह देख कर तीनों लड़के एक जगह जा बैठे और विचार करने लगे। "किसी न किसी तरह हमें रुपया कमाना है और उस रुपए से माँ का इलाज कराना है। बताओ, क्या किया जाए ?" बड़े ने कहा।

"तबीयत सुधरने के बाद भी माँ बहुत दिन तक कुछ काम-काज नहीं कर सकेगी। इसलिए पेट भरने की फिक्र भी हमें खुद करनी होगी।" मँझले ने कहा।

"यह सब तो ठीक है। मगर रुपया आएगा कहाँ से ?" छोटे भाई ने सवाल किया।

"मैं किसी दफ्तर में नौकरी कर लूँगा। सुना है, वहाँ अच्छे वेतन मिलते हैं।" बड़े ने कहा।

"मैं भी वही करूँगा। नौकरी करने से हम दोनों को बहुत सा रुपया मिलेगा।" मँझले ने कहा।

"बात तो ठीक है; लेकिन दफ्तरों में नौकरी करने के लिए पढ़े-लिखे आदमी चाहिए। हम तो अनपढ़ मूरख हैं। हमें कौन नौकरी देगा ?" छोटे ने पूछा।

"तो चलो, कोई रोज़गार ही शुरू कर दें। मूँगफली, दालमोट या किसी चीज़ का खोंचा बना लें और चिल्लाते हुए गली-गली

धनसुख सिंह

"बेचें ! बहुत से लड़के खरीद लेंगे।" बड़े ने सुझाया।

"हाँ ! शहर के एक हिस्से में बेचोगे ! दूसरे हिस्से में मैं बेचूँगा। यह भी तुम्हें अच्छी सूझी !" मँझले ने हाँ में हाँ मिलाई।

लेकिन छोटे को यह पसन्द न पड़ा। उसने उनकी बात काटते हुए कहा-"रोज़गार करने के लिए पहले पूँजी चाहिए। मूँगफली या फल खरीदने के लिए पहले पास में कुछ न कुछ पैसे चाहिए। मगर हमारे पास तो फूटी कौड़ी भी नहीं। यही नहीं, मूँगफली और दालमोट तो हम तीनों खुद पसन्द करते हैं। कहीं ऐसा न हो कि बेचने के बदले हमीं न खा जाएँ ! इसलिए तुम लोगों का कहना ठीक नहीं।"

फिर बड़े भाई ने बहुत से उपाय सुझाए। मँझले ने सबका समर्थन किया। लेकिन छोटे ने सबको बेकार बता दिया।

यह देख कर दोनों को बड़ा क्रोध आ गया और उन्होंने कहा-"हम जो कुछ कहते हैं वह तुमको मञ्जूर नहीं होता। सब बात काट देते हो, लेकिन तुम खुद कुछ बताते नहीं।"

इस पर छोटे ने कहा-"अच्छा, तो सुनो ! मैं एक उपाय बताता हूँ। इस शहर में आजकल बहुत जगह चोरियाँ हो रही हैं। राजा ने ढिँढोरा पिटवाया है कि जो चोरों को पकड़ लाएगा, उसे अच्छा ईनाम मिलेगा।"

"हाँ, यह तो हम भी जानते हैं। लेकिन इससे हमें क्या फ़ायदा ? चोरों को बड़े-बड़े पुलिस वाले भी नहीं पकड़ पाते। हम तो निरे लड़के हैं। उन्हें हम कैसे पकड़ सकेंगे ?" उसके दोनों भाइयों ने पूछा।

“हमें चोरों को पकड़ने की कोशिश नहीं करनी होगी। हम तीन जने हैं

न ? एक को चोर बन जाना होगा। बाकी दोनों उसको पकड़ कर राजा के पास ले जाएँगे और ईनाम पा लेंगे।" छोटे ने उपाय बताया।

उसके दोनों भाई उसकी बात सुन कर उछल पड़े। वे दोनों आपस में झगड़ने लगे कि चोर मैं बनूँगा तो मैं चोर बनूँगा।

तब छोटे ने कहा-"चोर जितना छोटा हो उतना ही अच्छा। इसलिए चोर मैं बनूँगा। तुम दोनों मुझे पकड़ ले जाओ !" दोनों भाइयों ने कहा- "ठीक!" लेकिन उनके मन में एक डर हुआ।

उन्होंने सोचा-"हम अपने छोटे भाई को चोर बना कर पकड़ ले जाएँगे और राजा को सौंप देंगे। हमें ईनाम तो मिलेगा। लेकिन भाई को जेल की सज़ा जो होगी।"

यह ख्याल आते ही दोनों मुकर गए। छोटे का कहना नहीं माना।

तब छोटे ने साहस के साथ कहा- "तुम लोग मेरा कहना नहीं मानोगे तो माँ मर जाएगी। मेरे जेल जाने के डर से तुम माँ को मार डालोगे ?"

लाचार होकर दोनों भाई राज़ी हो गए। फिर तो छोटे ने जरा भी देर न

की। उसने अपने कपड़े उतार दिए और एक लङ्गोटी पहन ली। फिर उसने थोड़ी सी कालिख अपने सारे बदन पर पोत ली और भाइयों से पूछा-"कहो ! मैं अब चोर जैसा लगता हूँ न ?"

वे बेचारे भी क्या जानें कि चोर कैसा लगता है ? उन्होंने सोचा, शायद ऐसा ही लगता होगा। इसलिए कह दिया- "हाँ ! हाँ ! ठीक चोर जैसे लगते हो।" फिर छोटा कहीं से एक रस्सी ले आया। उस रस्सी से दोनों ने उसके हाथ पीठ से बाँध दिए। वह फिर सच्चे चोर की तरह कसूरवार

का सा मुँह बना कर उन दोनों के पीछे-पीछे चलने लगा।

"थोड़ी दूर जाने के बाद उसने भाइयों से कहा-"तुम लोग मुझे डाँटते-फटकारते खींच-खाँच कर ले चलो ! बीच-बीच में चिल्लाते भी रहो। यों चुपचाप चलने से कोई क्या समझेगा ?"

छोटे के कहने के मुताबिक दोनों उसे घसीट कर ले जाने लगे। "देखो, चोर ! देखो, चोर!" कह कर चिल्लाते भी जाते थे। इसलिए बहुत से लोग जमा हो गए। इस तरह एक बहुत बड़ी भीड़ उनके पीछे चलने लगी।

किले के फाटक पर पहरेदारों ने उन्हें रोका। एक ने जाकर यह राजा से कहा। राजा ने हुक्म दिया कि उन लड़कों को अन्दर आने दो। राजा के सामने जाने पर उसने कड़क कर कहा-"क्या बात है ?" बस, दोनों भाइयों की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। उनके मुँह से एक भी बात न निकली और वे घबरा गए।

जब छोटे ने देखा कि मामला बिगड़ा ना रहा है तो उसने आगे बढ़ कर कहा-"हुजूर ! मैं एक चोर हूँ। इन दोनों ने मुझे पकड़ लिया है। आप इनको ईनाम दीजिए और मुझे सज़ा।"

राजा ताड़ गया कि इन तीनों ने ईनाम के लालच से यह साजिश रची हैं। उसने दोनों भाइयों को धमकाया कि सच बताओ ! बस, उन्होंने सारा भेद खोल दिया।

माता के प्रति उनका प्रेम और छोटे की चालाकी देख कर राजा बेहद खुश हुआ। उसने तुरन्त राज-वैद्य को बुलाया और उनकी माँ का इलाज करने का हुक्म दिया। कुछ ही दिनों में लड़कों की माँ चङ्गी हो गई। राजा ने उन लड़कों के पालन-पोषण का भार अपने ऊपर लिया और उनके बड़े होने के बाद नौकरियाँ भी दीं।

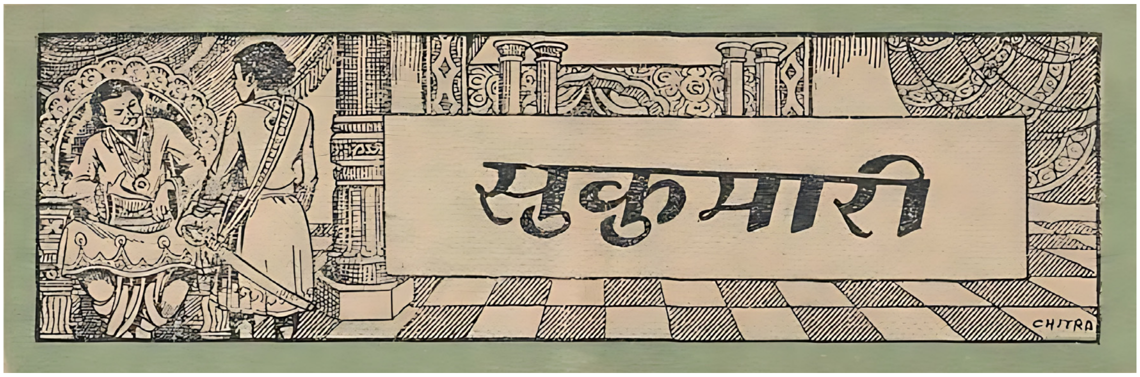

विदर्भराज के लड़के का नाम जयन्त था। वह बड़ा खूबसूरत था। सिर्फ़ खूबसूरत ही नहीं; वह बहुत ताकतवर और बहादुर भी था। जो राजकुमारी उसे एक बार देख लेती थी बस, हठ करने लगती थी कि मैं उसके सिवा और किसी से व्याह नहीं करूँगी। इसलिए जयन्त को हर रोज़ किसी न किसी राज से स्वयंवर का निमन्त्रण आता। जगह-जगह से राजकुमारियों के चित्र उसके पास पहुँचते और पूछा जाता कि लड़की उसे पसन्द पड़ी या नहीं।

जयन्त स्वयंवरों में जाता तो था ज़रूर। मगर लड़की उसे पसन्द न पड़ती और उससे सामना होने के पहले ही वह चुपके से खिसक जाता। उसके पास जो चित्र भेजे जाते, उनमें से एक भी उसको पसन्द न आता। एक-एक को उठा कर देखता और मुँह बना कर दूर फेंक देता।

इस तरह बहुत दिन बीत गए और उसको एक भी लड़की पसन्द न आई। यह देख कर उसकी माता के मन में बड़ी खलबली मची।

एक दिन उसने जयन्त को बुला कर कहा-"बेटा ! तुम्हें अपने मन की राजकुमारी से चाहे वह कोई भी हो, व्याह करना ही होगा। तुम व्याह कर लोगे और तुम्हारे बाल-बच्चे होंगे, यही आशा मैं बहुत दिनों से लगा बैठी हूँ। क्या तुम मेरी साध पूरी नहीं करोगे ?"

यह सुन कर जयन्त ने कहा-"मैं क्या करूँ ? मुझे एक भी राजकुमारी पसन्द नहीं पड़ती। ऐसा लगता है, जैसे ये सच्ची राजकुमारियाँ नहीं।"

यह सुन कर उसकी माता ने कहा- "बेटा ! सच्ची राजकुमारियाँ कैसी होती हैं ? क्या ये सब झूठी राजकुमारियाँ हैं ? मुझे

बता दो कि तुम कैसी राजकुमारी चाहते हो। मैं ढूँढ कर तुम्हारी शादी कर दूँगी।"

तब जयन्त ने कहा-"सच्ची राजकुमारी बहुत सुकुमारी होती है। मैंने बहुत सी राजकुमारियाँ देखीं। लेकिन मुझे एक भी न जँची।" यों कुछ दिन और बीत गए। विदर्भ की रानी तीर्थ-यात्रा के लिए काशी चलीं। महाराज ने जयन्त को भी माँ के साथ जाने का आदेश दिया।

विदर्भ की रानी और राजकुमार के काशी आने की बात सुन कर काशी की रानी ने धूम-धाम से स्वागत-सत्कार का प्रबन्ध किया और अपने ही महल में उन्हें ठहराया।

काशी-रानी के एक बहुत ही सुन्दर लड़की थी। उस लड़की के गाल गुलाब के समान कोमल थे। उसके हाथ मृणाल के समान मृदुल थे। वह जब चलती थी तो ऐसा मालूम होता था, जैसे मानसरोवर की मराली मृदुगति से विचरण कर रही हो।

उस लड़की को देखते ही विदर्भ की रानी ने सोचा कि ऐसी लड़की उसकी बहू बने तो कितना अच्छा हो? इसलिए उसने चुपके से जयन्त को पास बुलाया और दूर खड़ी राजकुमारी की तरफ इशारा करके पूछा-"बोलो, पसन्द है न ?"

जयन्त ने उस लड़की की सुन्दरता की प्रशंसा की। लेकिन अन्त में बोला-"यह कैसे मालूम हो कि वह असली राजकुमारी है ?" "क्या यह राजकुमारी नहीं है ? फिर तुम सुन लो; लाख बरस तक नाक रगड़ते रहोगे; तब भी ऐसी लड़की तुम्हें कहीं नहीं मिलेगी ! मेरी बात मान लो और इस लड़की से ब्याह कर लो !" रानी को क्रोध आ गया और उसने झल्ला कर कहा। राजकुमार ने खिसिया कर कुछ जबाब देना चाहा। लेकिन रानी ने एक न सुनी ! वह तुरन्त काशी की रानी के

पास गई और बोली-"मैं अपने लड़के के लिए आपकी लड़की माँगती हूँ। बोलिए ! देती हैं ?"

यह सुन कर अत्यन्त आहृद से काशी की रानी ने कहा-"इससे बढ़ कर और क्या सौभाग्य चाहिए ? लेकिन मेरी बेटी बहुत सुकुमारी है। जो राजकुमार उसे आँख की पुतली की तरह चाहेगा उसी से उसका व्याह होगा। इसीलिए हमने अभी तक उसके स्वयंवर की घोषणा नहीं की। महाराज का कहना है कि पहले उसके योग्य वर ढूँढ़ लेंगे; तब उसके व्याह की बात चलाएँगे।"

तुरन्त विदर्भ की रानी ने जाकर बेटे से कहा-"बेटा ! तुम इतने दिनों से जैसी राजकुमारी खोज रहे थे, वैसी ही मिल गई। यह लड़की बहुत ही सुकुमारी है।"

तब जयन्त ने कहा-"माँ ! बातों से क्या होता है। कहते तो हैं सभी इसी तरह। लेकिन परीक्षा लिए बिना मैं इससे ब्याह नहीं करूँगा!"

उसकी माता ने कहा-"अच्छा" और दिमाग लड़ाने लगी-"कौन सी परीक्षा ली जाए जिससे पता चले कि यह

राजकुमारी सुकुमारी है ?" इतने में साँझ हो गई। उसने देखा कि बीस दासियाँ बीस गद्दे लिए शयनागार की ओर जा रही हैं। तब रानी ने एक नौकरानी से पूछा-"अरी ! इतने पलङ्ग किसके लिए लिए जा रही हो?"

नौकरानी ने जवाब दिया-"हमारी राजकुमारी जी बहुत सुकुमारी हैं। जब तक बीस गद्दे एक पर एक नहीं बिछाए जाते हैं, उन्हें नींद नहीं आती।"

रानी ने सोचा-"चलो, देखें तो यह कैसा तमाशा है।" वह भी उनके साथ उस कमरे में चली गई।

गद्दे बिछाने वाली उन नौकरानियों में एक मटर खा रही थी। उसके हाथ से एक मटर का दाना छूट कर नीचे गिर पड़ा। यह देख कर विदर्भ की रानी को एक अच्छा उपाय सूझ गया। उन्होंने चुपके वह दाना उठा लिया।

दासियाँ पलङ्ग पर बीसों गद्दे एक पर एक बिछा कर चली गईं। रानी ने उस मटर के दाने को चुपके से सबसे निचले गद्दे के नीचे रख दिया और कमरे से बाहर चली गई। दूसरे दिन सबेरा होते ही विदर्भ की रानी राजकुमारी को देखने गई। राज-कुमारी का मुँह पीला पड़ गया था और वह बहुत थकी सी जान पड़ती थी। "क्यों बेटी ! क्या हुआ ? यों उदास क्यों दीखती हो ?" विदर्भ की रानी ने उससे पूछा।

"पिछली रात मुझे अच्छी तरह नींद नहीं आई।" उस लड़की ने तुरन्त जवाब दिया।

"बीस-बीस गद्दों पर सोने पर भी तुम्हें नींद नहीं आई ?" रानी ने अचरज के साथ पूछा।

इतने में काशी की रानी वहाँ आई बोली-"आजकल की नौकरानियाँ तो बिलकुल बेगार करने लगी हैं ! पलङ्ग पर मटर का दाना पड़ा था और उन्होंने बिना देखे-बूझे गद्दे बिछा दिए। इसके कारण मेरी बिटिया रात भर सो न सकी।" यह कह कर उसने वह मटर का दाना विदर्भ की रानी के सामने रख दिया।

विदर्भ की रानी तुरन्त अपने लड़के के पास गई और सारा हाल कह सुनाया। जयन्त खुशी से उछल पड़ा और ब्याह के लिए राजी हो गया। दूसरे ही दिन एक शुभ-मुहूर्त में जयन्त का उस सुकुमारी राजकुमारी के साथ बड़ी धूम-धाम से ब्याह हो गया।

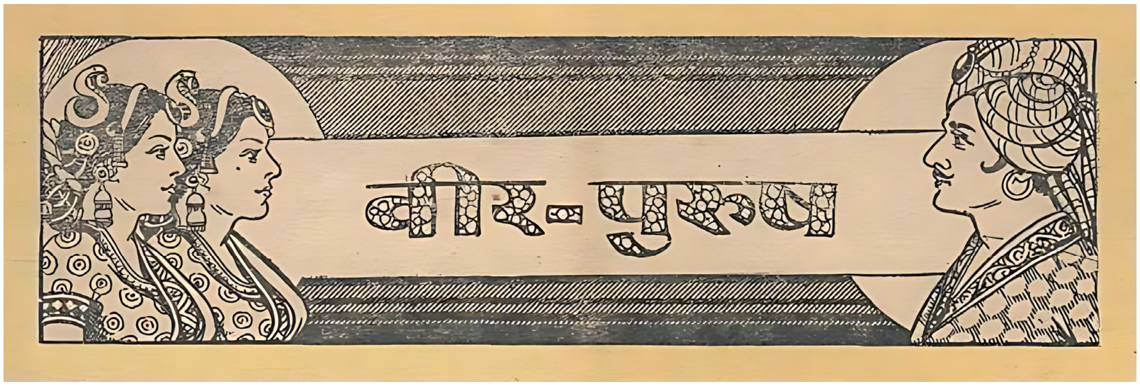

गण्डकी नदी के तीर पर एक बड़ा महल था। उस महल में गोवर्धन नाम का राजा रहता था। उस राजा के माया और छाया नाम की दो लड़कियाँ थीं। दोनों देखने में बिलकुल एक सी लगती थीं। दोनों को मिजाज़ से ही पहचाना जा सकता था। सूरत से नहीं।

कुछ दिन बाद वे सयानी हुईं। राजा ने अनेकों बार उनके स्वयंवर का प्रबन्ध किया। लेकिन उन लड़कियों को एक भी राजकुमार पसन्द न आया। यहाँ तक कि राजा का धीरज भी जाता रहा।

एक दिन उसने राजकुमारियों को बुला कर कहा-"बेटियो ! मैं अब तुम लोगों के ब्याह के मामले में कोई दखल नहीं दूँगा। मैंने हाथ धो लिया। तुम दोनों जिससे चाहो व्याह कर लो। न हो तो देश-विदेश घूम कर अपने लायक वर खोज लो ! मैं तुम्हें नहीं रोकूँगा।" उसने दोनों बेटियों से साफ कह दिया।

कुछ दिन बाद जङ्गल में हिरनों का शिकार खेलता यशपाल नाम का एक राजकुमार उधर आ निकला। उस वक्त दोनों बहनें वहाँ गेन्द खेल रही थीं। उन दोनों में होड़ लगी हुई थी कि गेन्द को कौन ज्यादा ऊपर उछालती है !

थोड़ी देर तक उनका खेल देखने के बाद यशपाल ने कहा-"वाह ! यह भी कोई खेल है ? गेन्द को तो ऐसा उछालना चाहिए कि बादलों में खो जाए !" यह सुन कर दोनों बहनों ने कहा -"डीङ्ग न हाँको ! तुम से हो सके तो उछाल कर दिखा दो न !" "अगर उछाल कर दिखा दूँ तो कहो, क्या ईनाम दोगी ?" यशपाल ने पूछा। यह सुन कर दोनों बहनें उसे अपने पिता के पास ले गईं। राजा ने यशपाल की खूब खातिरदारी की और अपने बगीचे में गेन्द की

उषा चौहान

प्रतियोगिता का प्रबन्ध किया। पहले राजकुमारियों ने अपना कौशल दिखाया। पीछे जब यशपाल ने गेन्द को उछाला तो वह उसके जादू के प्रभाव से इतनी ऊँची उछली कि बादलों में खो गई। यह देख कर सब लोग दङ्ग रह गए। राजा ने खुश होकर कहा-"बेटा ! तुम बड़े वीर-बहादुर जान पड़ते हो। अच्छा तो सुनो, मेरी दोनों बेटियों से ब्याह कर लो और मेरे राज का आधा हिस्सा भी ले लो !"

दोनों राजकुमारियाँ भी जादू जानती थीं। इसलिए यशपाल को देखते ही उनके मन में हुआ कि ऐसे ही चतुर पुरुष से ब्याह करना चाहिए। दोनों बहनें एक सी लगती थीं। लेकिन न जाने क्यों, पहले से ही यशपाल का मन छाया की ओर ज्यादा झुक रहा था। इसलिए उसने अपने मन की बात राजा से कही। राजा ने कहा-"बेटा! हमारी परम्परा है कि पहले बड़ी लड़की का ब्याह होता है, पीछे छोटी लड़की का। इसलिए तुम चाहो तो दोनों से ब्याह कर सकते हो। अगर एक ही को चाहते हो, तो माया देवी से करो। माया का व्याह हुए बिना छाया का ब्याह नहीं हो सकता।"

तब यशपाल ने कहा-"अच्छा, मेरी परीक्षा तो हो गई। अब मैं आपकी लड़कियों की भी कुछ परीक्षा लेना चाहता हूँ। तीन दिन के अन्दर जो उस परीक्षा में जीत जाएगी उससे मैं ब्याह कर लूँगा।" राजा ने उसकी बात मान ली।

दूसरे दिन सबेरा होते ही यशपाल अदृश्य हो गया। उसने सोचा था कि उसका भेद किसी को मालूम नहीं है। लेकिन माया सारी रात जाग कर पहरा दे रही थी। उसने चुपके से उसका पीछा किया। छाया ने सोचा-"जब समय आएगा तो मैं अपना कौशल दिखाऊँगी।

अभी क्या जल्दी है !" इसलिए वह वहीं रह कर उन पर निगाह रखने लगी।

यशपाल जो रात के वक्त चल पड़ा था, बिना पीछे मुड़े जङ्गलों से होकर जा रहा था। माया भी परछाई की तरह उसका पीछा कर रही थी। सबेरा होते ही यशपाल एक आम के पेड़ के नीचे आराम करने लगा। इतने में उसे ऐसा लगा जैसे कोई बुला रहा हो। उसने चारों तरफ निगाह दौड़ाई। लेकिन कोई नहीं दिखाई दिया। फिर भी आवाज़ उसने पहचान ली। वह तो राजकुमारी माया पुकार रही थी।

यशपाल उठा और एक पेड़ पर चढ़ गया। उसे कोई आदमी तो नहीं दिखाई दिया। लेकिन ऐसा लगा, जैसे कोई कुल्हाड़ी से उस पेड़ को काट रहा हो। थोड़ी ही देर में पेड़ जड़ से हिलने लगा, जैसे अब गिरा तब गिरा।

यह देख कर उसने एक टहनी तोड़ ली और कुछ मन्त्र पढ़ कर उसे हवा में छोड़ दिया। फिर खुद भी उछल कर उस पर बैठ गया। वह टहनी हवाई जहाज़ की तरह आसमान में उड़ने लगी। यशपाल निश्चिन्त होकर उस पर बैठा विहार करने लगा।

लेकिन बेचारे को क्या मालूम था कि माया उसका पीछा कर रही है। धीरे धीरे दिन चढ़ आया। दोपहर होते होते यशपाल थक गया और नीचे उतर कर एक इमली के पेड़ के नीचे आराम करने लगा। इतने में उसे उस पेड़ के तने में एक खोखला दिखाई दिया। माया के डर से वह उसमें घुस गया और एक भयङ्कर जादू का साँप बना कर उसे बाहर पहरे पर बिठा दिया।

माया भी उसी पेड़ के पास उतरी। खोखला देखते ही उसने भाँप लिया कि यशपाल इसी में छिपा है। लेकिन पहरे पर बैठे उस भयङ्कर साँप को देखते ही वह डर

गई। इसलिए कुल्हाड़ी लेकर उस पेड़ को काटने लगी। लेकिन बहुत ज़ोर लगाने पर भी उस पेड़ के लोहे जैसे कठिन तने पर कुल्हाड़ी का कुछ असर न हुआ। यहाँ तक कि कुल्हाड़ी के दो टुकड़े हो गए।

यशपाल ने खोखले में से निशाना लगा कर उस पर एक तीर छोड़ा। माया झट एक भेड़िया बन कर हँसती हुई वहाँ से भाग गई। इतने में यशपाल को ज़ोर की भूख लगने लगी। वह खोखले से बाहर आया। "अभी तो जङ्गल में जाकर शिकार कर लाने में देर हो जाएगी। इसलिए चलो, गण्डकी में से कुछ मछलियाँ ही पकड़ लाएँ।" यह सोच कर वह सीधे नदी की ओर चल पड़ा।

मछलियाँ पकड़ कर जब तक लौट कर आया तो उसने देखा कि वहाँ एक सुन्दर कुटीर बनी हुई है। उस कुटीर से एक सुन्दर युवती बाहर निकली और बोली-"राजकुमार ! मैं इस जङ्गल के राजा की बेटी हूँ। मैं जादू-टोना भी जानती हूँ। मैंने अपने जादू से यह कुटिया भी खड़ी कर दी है। मैं तुम्हारी सेवा करने आई हूँ। मुझे स्वीकार करो !" यह कह कर उसने उसके हाथ से मछलियाँ ले लीं।

थोड़ी देर में उसने मछलियाँ पका लीं। लेकिन यशपाल को एक टुकड़ा भी नहीं दिया। सब कुछ खुद खा गई। बेचारा यशपाल बहुत देर तक इन्तज़ार करता रहा। आखिर रसोई-घर में जाकर देखा तो सब कुछ मालूम हो गया। भूख के मारे वह बेहाल हो रहा था। इसलिए उसे बहुत गुस्सा आया। उसने उसे मारने के लिए ज्यों ही हाथ उठाया कि भेड़िया बन कर हँसती हुई वह भाग गई। तब उसने जाना कि वह माया थी। खिसिया कर वह सोचने लगा कि कैसे

इसका बदला लिया जाए ? वह रात में भी वहीं ठहर गया।

दूसरे दिन यशपाल मछलियाँ पकड़ने के लिए फिर गण्डकी के किनारे गया। बड़ी-बड़ी तीन मछलियाँ पकड़ीं। लौट कर क्या देखता है कि कल की तरह आज भी एक कुटीर खड़ी है। उसने सोचा- "अच्छा मौका मिला। मैं अब इसे खूब मज़ा चखाऊँगा।" यह सोच कर वह क्रोध से दरवाजे पर खड़ा रहा। इतने में कुटीर के अन्दर से एक युवती निकली और सिर झुका कर उसके सामने खड़ी हो गई। देखने में वह वैसी ही सुन्दर मालूम हुई। राजकुमार यशपाल उससे कुछ नहीं बोला। उस युवती ने उसके हाथों से मछलियाँ ले लीं और कहा-"हे राजकुमार ! मैं इस जङ्गल के राजा की लड़की हूँ। मैं जादू-टोना भी जानती हूँ। यह कुटिया मैंने अपने जादू के प्रभाव से बनाई है। मैं तुम्हारी सेवा करने आई हूँ। मुझे स्वीकार कर लो।" राजकुमार अब तक समझ रहा था कि यह माया ही है। इसलिए वह बहुत चौकन्ना था। उस युवती ने पल में मछलियाँ पका कर उसे परोस दीं। तब राजकुमार ने कहा-"आओ, तुम भी खा लो !"

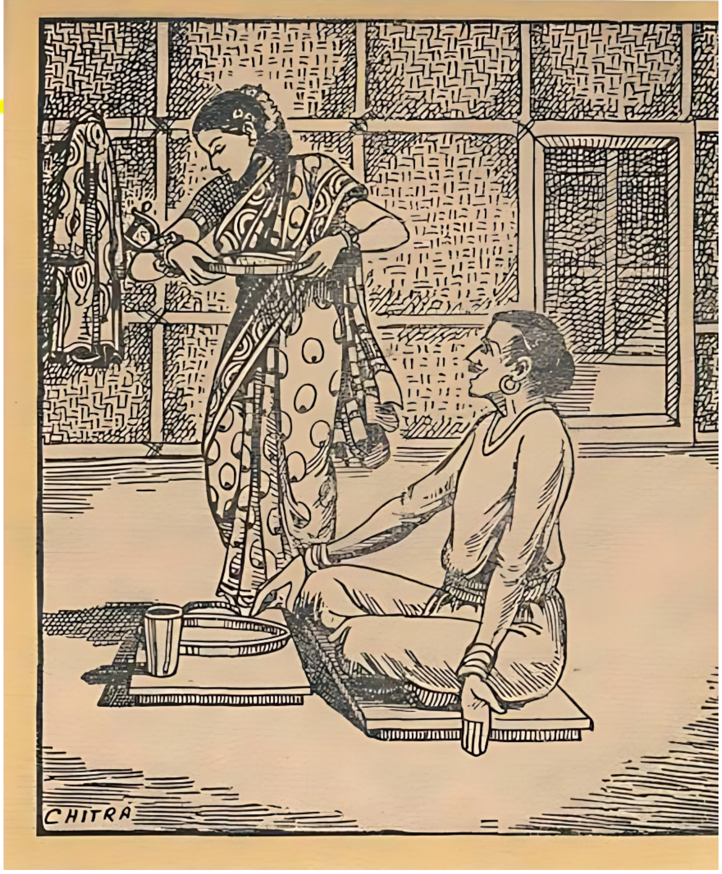

उस युवती ने जवाब दिया-"नहीं, पहले आप खा लीजिए ! मैं पीछे खाऊँगी । क्योंकि मैं मछलियाँ नहीं खतीं। मैंने वे आप ही के लिए पकाई हैं। मैं तो उन्हें छूती भी नहीं। लेकिन सुनिए, मेरे ऊपर एक शाप पड़ा हुआ है। जिस दिन नदी उमड़ कर आएगी और मेरे पैर छू लेगी उस दिन मैं अपनी सन्तान के साथ मछली बन जाऊँगी।"

उसकी बात सुन कर राजकुमार ने निश्चय कर लिया कि यह माया देवी नहीं है। इसलिए उसने उससे ब्याह कर लिया। वे दोनों उसी कुटीर में रहने लगे। कुछ दिन बाद उनके दो लड़के हुए।

उसके शाप की बात यशपाल भूला नहीं था। इसलिए वह कभी उसे घर से बाहर नहीं जाने देता था। एक दिन यशपाल अपनी पत्नी और बच्चों के साथ पहाड़ पर गया। लौटते वक्त राह में एक झरना पड़ा। उसे अब शाप की बात याद आई। लेकिन उसने सोचा-"यह झरना है। नदी नहीं है।" यह सोच कर वह निधड़क पार हो गया। उसके पीछे पत्नी और बच्चे भी पार होने लगे। बेचारे यशपाल को क्या मालूम था कि आगे जाकर वह झरना नदी में मिल जाता है। देखते देखते वह छोटा सा झरना उमड़ पड़ा। उसकी पत्नी और बच्चों के पैर भीग गए। पल भर में तीनों मछलियाँ बन गए और पानी में तैरने लगे। "मुझे अब अपनी भूल मालूम हो गई। क्या इस शाप से छुटकारा पाने की कोई उम्मीद नहीं ?" पछताते हुए यशपाल ने पूछा। "यह सब जादू है ! हम कुछ नहीं कर सकते।" उसकी पत्नी ने जवाब दिया। इतने में यशपाल को अपने सामने माया खड़ी दिखाई दी ! वह पूछने लगी-"क्यों ? अब भी तुम मुझसे ब्याह करने को राजी होते हो कि नहीं ?" "मैं मर जाऊँगा, लेकिन तुम से ब्याह नहीं करूँगा।" यशपाल ने साफ साफ कह दिया।

उसी समय देवी भवानी प्रत्यक्ष हुईं। देवी ने कहा-"बेटा यशपाल ! माया और छाया दोनों राजकुमारियाँ मेरी कृपा से पैदा हुई हैं। दोनों में कोई अन्तर नहीं। मैंने ही उनको तुम जैसे वीर पुरुष को चुन कर ब्याह करने की सलाह दी थी। माया की परीक्षा में तुम उत्तीर्ण हुए और जीत गए। आज तक जो तुम्हारी पत्नी बनी हुई थी वह छाया थी। लो, अब माया से भी ब्याह कर लो और सुख से जीवन बिताओ !" यह कह कर आशीर्वाद देकर देवी अन्तर्धान हो गईं। छाया अपने दोनों बच्चों के साथ बाहर आ गई। यशपाल ने माया से भी ब्याह कर लिया। सब मिल कर राजा गोवर्धन के महल में जाकर सुख से रहने लगे।

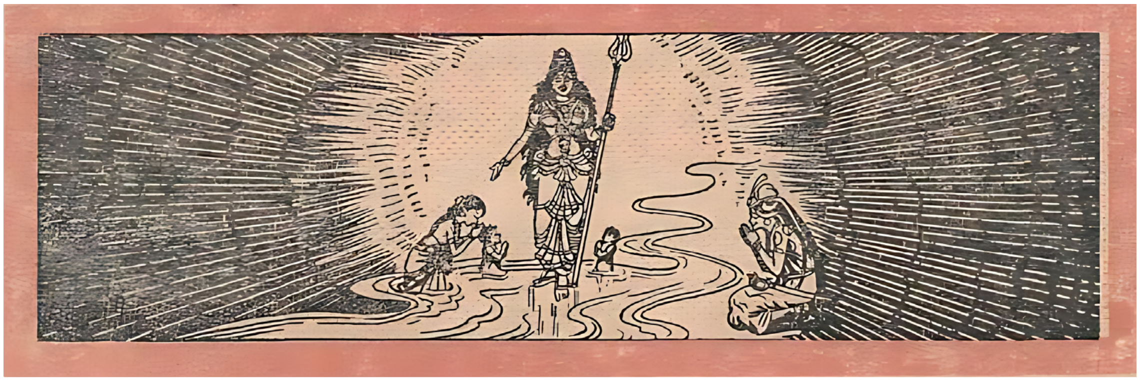

कुनेगाँव में कामराज नाम का एक सेठ रहता था। उसकी पत्नी का नाम धनेश्वरी था। उसके दो पुत्र थे। कामराज की उमर ढल चुकी थी। इसलिए उसने सारा कारोबार अपने लड़कों को सौंप दिया था। एक दिन सेठ ने सेठानी से कहा-"तुम भी अब घर का सारा काम-काज दोनों बहुओं के हवाले कर दो। हम दोनों चैन से भगवान का नाम लेंगे और रोज़ शाम को देवालय जाकर कथा-पुराण सुनेंगे!"

"अच्छा ऐसा ही करेंगे! कथा ही तो है। उसके सुनने में रुपया-पैसा थोड़े ही लगता है?" धनेश्वरी ने कहा और रोज़ शाम को राम-मन्दिर में कथा सुनने लगी।

कामराज कथा को आरम्भ से अन्त तक बड़ी श्रद्धा से सुनता। सुनती तो धनेश्वरी भी थी। लेकिन बीच-बीच में उसका मन ऊब जाता और वह सोचती-"चलो, घर चलें।" लेकिन अन्त में प्रसाद बँटता था। धनेश्वरी बिना प्रसाद लिए जाना भी नहीं चाहती थी। इसलिए वह मन को रोक कर बड़े सब्र से कथा के अन्त तक बैठी रहती।

प्रसाद लेकर धनेश्वरी घर आती और अपनी बेटी कामेश्वरी के हाथ में बड़े प्रेम से रख देती। वह प्रसाद हमेशा अपनी बेटी को ही देती। बहुओं को कभी एक दाना भी नहीं देखने देती।

आखिर एक दिन सेठ ने अपनी पत्नी से कहा-"तुम बहुओं को प्रसाद कभी नहीं देतीं। यह कैसा अन्याय है? क्या वे नहीं सोचेंगी कि तुम बेटी के साथ पक्षपात कर हो! यह ठीक नहीं। बहुओं को भी बेटियों के समान ही समझना चाहिए!"

यह सुन कर धनेश्वरी ने सोचा-"मेरा भेद तो खुल गया। अगर कहीं बेटे भी जान गए कि बहुओं को मैं प्यार नहीं करती

नित्यानन्द झा

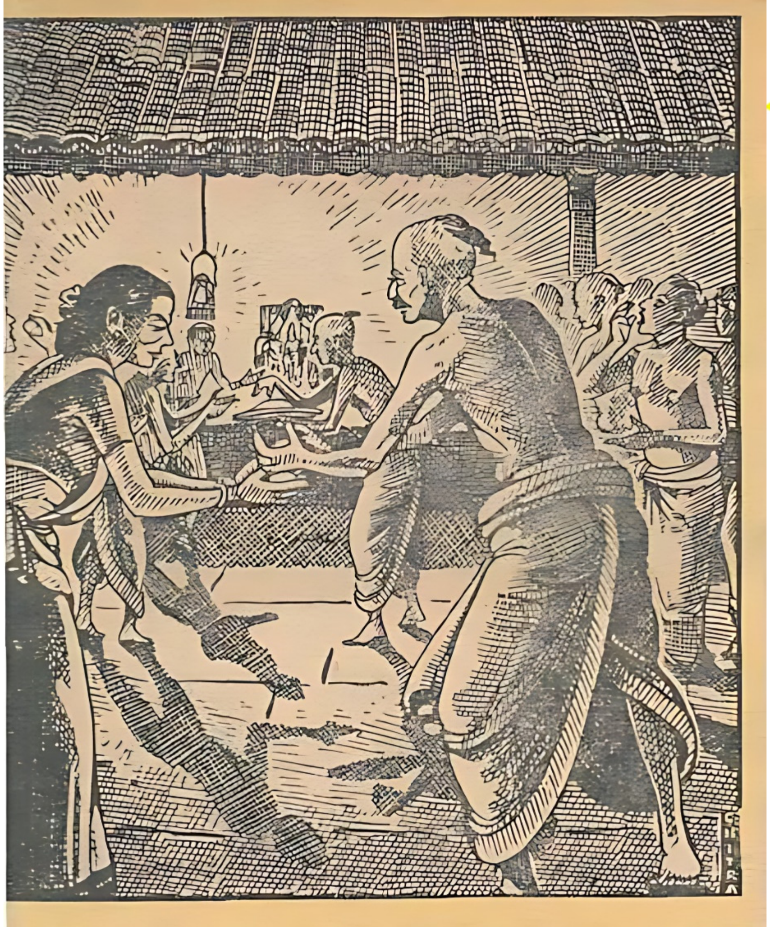

तो वे क्या समझेंगे ? इसलिए आगे से ऐसी बातों में खूब होशियार रहना चाहिए।" उसने निश्चय कर लिया।

धनेश्वरी ने जिस दिन यह शुभ-सङ्कल्प कर लिया उसके दूसरे ही दिन मन्दिर में पुराण कहने वाले पण्डित ने राम जनम के प्रसङ्ग का वर्णन करते हुए कहा-"सन्तान प्राप्ति के लिए दशरथ ने जब पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया तो हवन कुण्ड में से अग्नि देव ने निकल कर कहा-"राजन् ! जाओ, यह खीर ले जाकर अपनी रानियों को दो। उनकी कोख से तुम्हारे घर में सुपुत्रों का जन्म होगा।" यह कह कर उसने खीर से भरा एक पात्र दशरथ को दिया और वह अन्तर्धान हो गया।

राजा ने उस खीर के दो हिस्से किए और आधी खीर कौशल्या को और आधी कैकेई को दे दी। सुमित्रा को कुछ भी नहीं मिला। लेकिन तीनों रानियाँ आपस में बड़े प्रेम से रहती थीं। इसलिए कौशल्या ने अपने हिस्से से आधी खीर सुमित्रा को दी। कैकेई ने भी वैसा ही किया। इस तरह अन्त में उन दोनों से ज्यादा ही खीर सुमित्रा को मिली। सुमित्रा को खीर के दो हिस्से मिले थे। इसलिए उसके दो लड़के पैदा हुए। कौशल्या और कैकेई के एक एक लड़का पैदा हुआ।" यह बृत्तान्त सुन कर धनेश्वरी के मन में एक विचित्र विचार उठा। "दशरथ अपनी दोनों रानियों से ज्यादा सुमित्रा को ही प्यार करता था।" उसने सोचा।

"कौशल्या और कैकेई पर उसका प्रेम बनावटी था। इसीलिए उसने ऐसी चालाकी की जिससे सुमित्रा को दो हिस्से मिलें। वाह ! राजा की चतुराई का क्या कहना !" इतना ही नहीं; धनेश्वरी ने यह भी सोचा कि वह भी राजा दशरथ की तरह अपनी बेटी से भी ज्यादा, बहुओं पर ही प्रेम दिखाएगी।

उस दिन कथा समाप्त होने के बाद प्रसाद में हर एक को एक-एक सन्तरा बाँटा गया। कामराज ने रोज़ की तरह अपने हिस्से का प्रसाद भी पत्नी को ही दे दिया। लेकिन आज घर आने पर धनेश्वरी ने प्रसाद बेटी को न देकर दोनों बहुओं में बराबर-बराबर बाँट दिया।

बहुएँ चकित हो गईं। क्योंकि रोज़ तो सब कुछ ननद को ही मिलता था। बहुओं ने सास से पूछा भी कि बात क्या है ?

इस पर धनेश्वरी ने कहा-"रोज़ प्रसाद मिलता ही कितना था ! ज़रा-ज़रा से किसी को सन्तोष नहीं होता। इसलिए मैं लड़की के हाथ में डाल देती थी। आज दो फल मिले हैं। इसलिए मैंने तुन दोनों को दे दिए।"

"लेकिन ननद को दिए बिना यह प्रसाद हम कैसे खाएँ ?" बहुओं ने सङ्कोच के साथ कहा।

"उसको हिस्सा लगा कर देने की क्या ज़रूरत है ? दोनों एक एक फाँक दे दोगी तो बस होगा।"उनकी सास ने जवाब दिया।

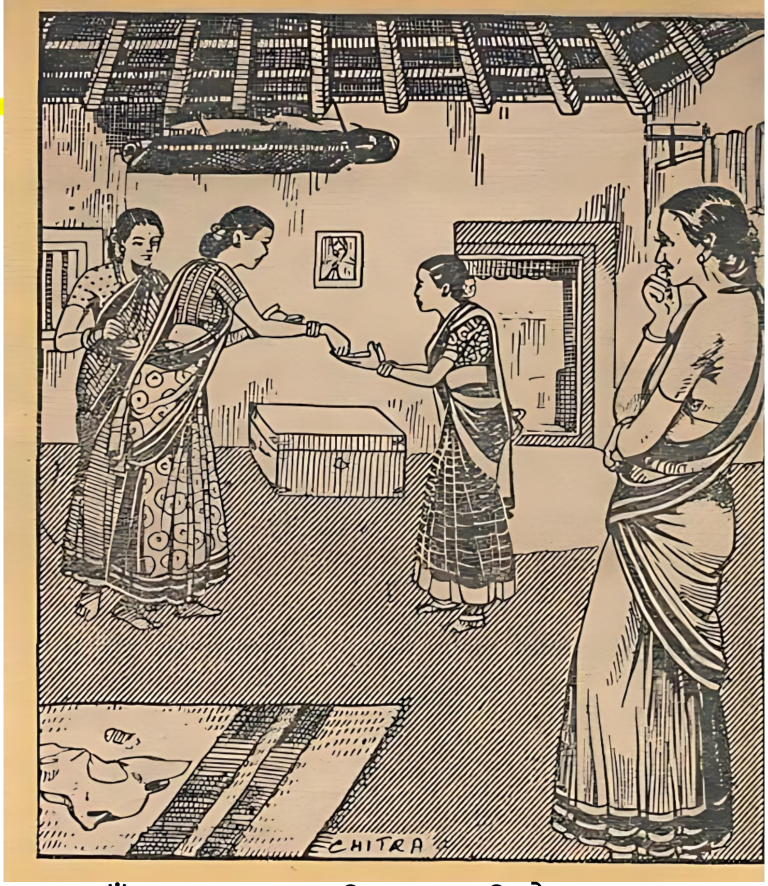

"हाँ, आप बहुत ठीक कहती हैं।" कह कर दोनों बहुओं ने अपने अपने फलों में से एक-एक हिस्सा ननद को दे दिया।

कामराज और उनके बेटों ने बहुओं को प्रसाद देते हुए देख लिया था। वे सब उसकी उदारता देख कर बहुत खुश हुए। उसके बाद क्या हुआ, यह उन्हें कैसे मालूम हो सकता था ?

धनेश्वरी मन ही मन बहुत खुश हुई कि उसकी चाल चल गई। उसने सोचा-"कथा सुनने से ही तो मुझे यह तदबीर सूझी। इसीलिए बड़े-बूढ़े कहते हैं कि भगवान की कथा सुनने से बहुत फ़ायदा होता है।"

स्वर्गपुरी में देवराज इन्द्र का शासन शुरू हुआ तो उन्होंने वहाँ के रहने वालों की भलाई के लिए बहुत से काम किए। उसके बाद वे सोचने लगे कि धरती पर रहने वालों के लिए क्या किया जाए ? अन्त में उन्होंने सातों तारिकाओं को बुलाया। वे सात परियों के रूप में आकर उनके सामने हाथ जोड़ कर खड़ी हो गईं।

उनके उस तरह एक जगह आकर खड़े हो जाने से एक दिव्य प्रकाश फैल गया। पृथ्वी पर रहने वाले सभी सिर उठा कर आसमान की ओर देखने लगे। वह प्रकाश देख कर उन्हें अचरज तो हुआ ही। साथ साथ डर भी लगा कि प्रलय होने वाला है। सातों तारिकाओं ने एक स्वर में पूछा-"देव ! क्या आज्ञा है ?"

तब देवराज ने कहा-"मैं पृथ्वी पर रहने वालों को सब तरह के सुख देना चाहता हूँ। लेकिन मुफ्त में देने से किसी चीज़ की कीमत नहीं जानी जाती। इसलिए तुम सातों जाकर मेरी दी हुई चीजें उनको बेच आओ।" देवराज ने कहा। "बहुत अच्छा ! देव !" सातों तारिकाओं ने अत्यन्त मीठे स्वर में कहा। धरती पर रहने वालों को जो अचरज से आसमान की तरफ देख रहे थे, दिव्य-गान सुनाई देने लगा।

सातों तारिकाएँ एक कतार में खड़ी थीं न ? पहली तारिका को देवराज ने एक सुन्दर डिबिया दी और कहा- "लो ! इसी डिबिया में हास्य है। जो इसका सेवन करते हैं उन्हें आनन्द होता है। आनन्द ही मनुष्य को जीवन देता है।" दूसरी तारिका को और एक डिबिया देकर उन्होंने कहा- "इसमें सच्चरित्रता है। यह मनुष्य को प्राण देता है।" तीसरी को उन्होंने और एक डिबिया देकर

कान्तिकुमारी

कहा-"इसमें स्वास्थ्य है। इससे बढ़ कर कोई चीज़ नहीं।" चौथी को भी उन्होंने एक डिबिया देकर कहा-"इसमें दीर्घ-जीवन है। यह मनुष्य के लिए बहुत ज़रूरी है।" पाँचवीं को उन्होंने एक डिबिया देकर कहा-"इसमें यश है। इससे मनुष्य को सम्मान प्राप्त होता है।" छठी को उन्होंने एक डिबिया देकर कहा-"इसमें आनन्द है। इसी के लिए बड़े-बड़े ऋषि-मुनि भी लालायित रहते हैं।" सातवीं को उन्होंने एक डिबिया दी और कहा-"इसमें सम्पदा है यह मनुष्य के सुखमय जीवन का साधन है।" बस, सातों तारिकाएँ पृथ्वी पर उतर आईं और अपना अपना माल बेचने की कोशिश करने लगीं। चौथी तारिका बाज़ारों में घूमती हुई "दीर्घ जीवन ! दीर्घ जीवन चाहिए !" कह कर चिल्लाने लगी। उसकी आवाज़ सुन कर बहुत से लोग दीर्घ-जीवन खरीदने दौड़े आए। अच्छी खासी जमघट लग गई।

यह देख कर चौथी तारिका ने पूछा-"सज्जनो ! आपने मेरी बहनों की चीजें खरीदीं कि नहीं ! मेरी बड़ी बहन हँसी बेचती है। दूसरी सच्चरित्रता और तीसरी स्वास्थ्य बेचती है। पाँचवीं यश, छठी आनन्द और सातवीं सम्पदा बेचती है। ये सब चीजें आपने खरीदीं कि नहीं ?"
"नहीं !" उन लोगों ने जवाब दिया।

तब चौथी तारिका ने कहा-"लेकिन उन सब चीज़ों के बिना मेरा माल किसी काम का नहीं।

जो वे सब चीजें खरीद लेते हैं उन्हीं को दीर्घ जीवन प्राप्त होता है। इसलिए आप लोग जा सकते हैं।" यह कह उसने अपनी डिबिया बन्द कर ली। लेकिन उसने उन लोगों को दिखाने के लिए हाथ में थोड़ी दवाई ले ली थी। वह उसे डिबिया में डाल देना भूल गई थी। इसलिए सामने के पेड़ पर जब एक तोता दिखाई दिया तो उसने वह दवा उस तोते को चुगा दी। उस दवा के प्रभाव से तोते तीन सौ बरस तक जीने लगे। इसीलिए आज भी तोते चिरजीवी होते हैं ।

निकम्मी किताब

किसी देश पर चतुरपाल नाम का राजा राज करता था। वह सब शास्त्रों में पारङ्गत था और मन्त्र-तन्त्र, जादू-टोना आदि बहुत अच्छी तरह जानता था। उसमें ऐसी शक्ति थी कि कई लम्बी बीमारियों को जिन पर किसी दवा का असर न होता था, वह यों ही अच्छी कर देता था। उसमें और भी कई प्रकार की शक्तियाँ थीं। लेकिन उसने सब शक्तियों का उपयोग लोगों की भलाई के लिए ही किया। उसने इन शक्तियों के बल से अपने दुश्मनों का भी कोई नुकसान नहीं किया।

थोड़े ही दिनों में उस राजा का यश देश-विदेश में भी फैल गया। उन दिनों दर्शन, ज्योतिष, आयुर्वेद आदि जो शास्त्र थे उनकी जटिल से जटिलतर समस्याओं को भी वह राजा आसानी से सुलझा लेता था। उसके बारे में उन दिनों ऐसी-ऐसी अद्‌भुत कथाएँ प्रचलित हो गईं कि अन्य राजाओं और पण्डितों को उनकी सचाई के बारे में शक होने लगा। वे सोचने लगे कि चतुरपाल वास्तव में उतना पण्डित और चतुर नहीं है जितना कि कहा जाता है। इसलिए एक बार वे सभी दल बाँध कर स्वयं चतुरपाल की परीक्षा लेने आए। चतुरपाल ने उन सबका उचित सत्कार किया और एक बड़ी सभा का प्रबन्ध किया।

अनेक देशों से आए हुए राजा और पण्डित लोग उस सभा में बैठे। उन सबने तरह-तरह के सवाल करके चतुरपाल की परीक्षा ली। चतुरपाल ने निश्चिन्त होकर उनके सब सवालों का जवाब दिया और सन्तुष्ट किया।

सभा में सन्नाटा छा गया। ऐसा मालूम होता था कि अब कोई सवाल बाकी नहीं रह गया है। तब चतुरपाल ने अपने

धर्मदेव

सिंहासन से उठ कर मुसकुराते हुए उन लोगों की ओर देखा।

उसी समय सभा के एक कोने में हल्की आहट हुई जो धीरे धीरे शोर में बदल गई। लम्बी दाढ़ी वाले एक पण्डित और लम्बी मूँछों वाले एक राजा, दोनों खड़े हो गए और आपस में कहने लगे कि-"पहले मैं पूछूँ या तुम पूछोगे ?

चतुरपाल ने उन दोनों की ओर ध्यान से देखा और सिर हिलाया।

"आप किसी मुरदे को जिन्दा कर सकते हैं ?" राजा और पण्डित दोनों ने एक ही साथ पूछा। "ज़रूर !" चतुरपाल ने अडिग होकर जवाब दिया। फिर उसने उन दोनों की ओर देख कर पूछा-"आप दोनों में से कौन उस प्रयोग का पात्र होना चाहते हैं ?"

राजा और पण्डित एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। काटो तो खून नहीं। दोनों चुपचाप अपनी अपनी जगह पर बैठ गए। यह देख कर चतुरपाल को हँसी आ गई। उसने कहा-"खैर, आदमियों में ही नहीं; पशु-पक्षी में भी तो प्राण होते हैं !" यह कह कर उसने उन लोगों की तरफ एक बार देखा। लोग एक स्वर से कहने लगे

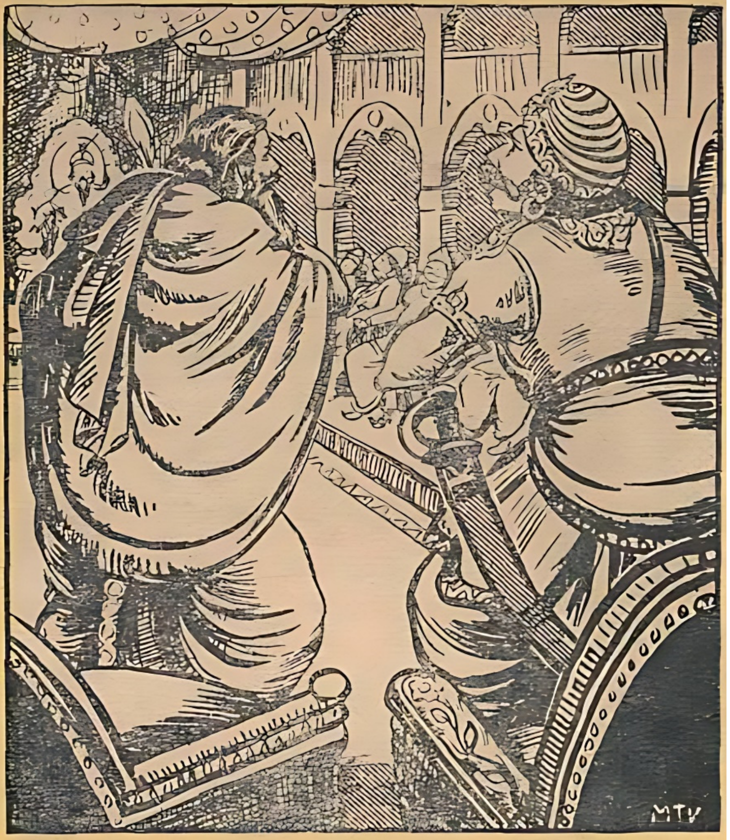

"हाँ, हाँ !" चतुरपाल ने तुरन्त अपने नौकर को बुलाया। नौकर आया और सिर झुका कर खड़ा हो गया ! "जल्दी जाकर कहीं से एक मुरगा ले आओ !" चतुरपाल ने आज्ञा दी।

सिर्फ़ पाँच मिनट की देरी हुई। लेकिन सबको ऐसा लगा जैसे पाँच युग बीत गए हों। लोग एक दूसरे के कान में कहने लगे-"हाँ, हाँ ! अब इनकी शक्ति की परीक्षा हुई जाती है।"

नौकर मुरगा ले आया। चतुरपाल ने तलवार उठा कर उस मुरगे का सिर धड़ से जुदा कर दिया। फिर उसने एक हाथ में धड़ और दूसरे में सिर पकड़ कर लोगों को

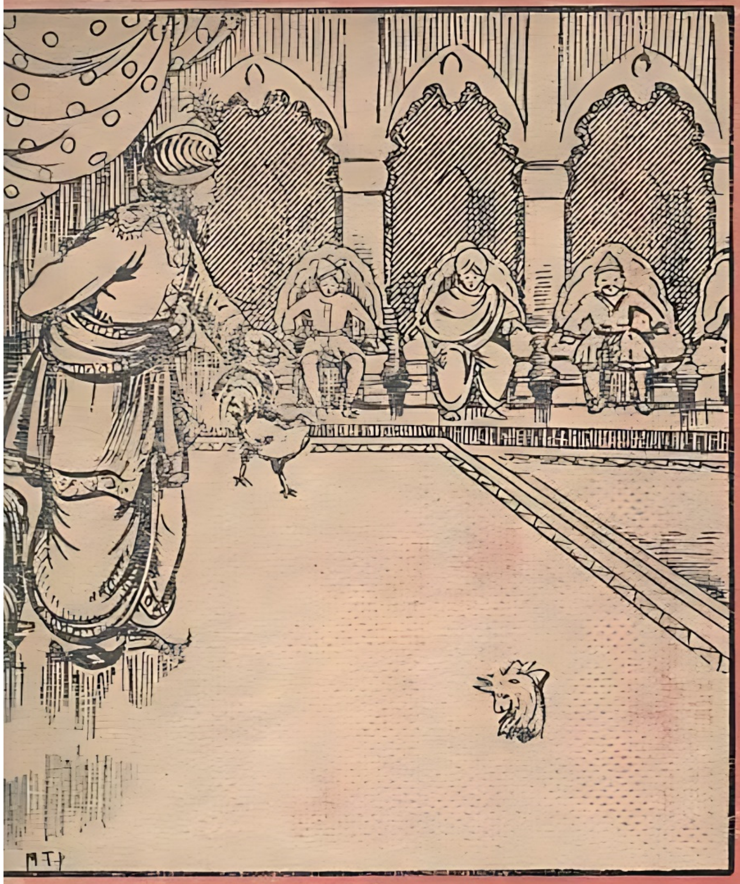

यह देख कर दरबार में जितने लोग थे भय और विस्मय से सन्न रह गए। हठात् सब उठ कर खड़े हो गए और हाथ जोड़ कर चतुरपाल को प्रणाम करने और उसका जय घोष करने लगे।

"ऐसी अपूर्व विद्या आपने कहाँ सीखी ?" सब ने चतुरपाल से पूछा।

"क्या आप इसका रहस्य जानना चाहते हैं ?" चतुरपाल ने पूछा।

"हाँ, हमें इसकी बड़ी उत्सुकता है।" उन लोगों ने कहा ।

दिखाया और पूछा-"आप लोगों को विश्वास हो गया न कि यह मर गया है ?" "हाँ, हाँ, इसमें क्या शक है ?" सब लोगों ने कहा। तब नौकर राजा के आज्ञानुसार धड़ को उठा कर एक ओर और सिर को दूसरी ओर रख आया। अब चतुरपाल ने मुरगे के निर्जीव धड़ को देख कर कहा-"ऐ धड़ ! जाकर अपने सिर से लग जाओ !"

आश्चर्य ! मुरगे का धड़ उठा और सीधे जाकर सिर के पास चला गया। सिर उठ कर उसकी गरदन पर बैट गया। बस, मुरगा जी उठा और पङ्ख फटकार कर बाँग देते हुए वहाँ से भाग खड़ा हुआ।

"तो सुनिए !" कह कर चतुरपाल ने कहानी शुरू कर दी-"बचपन से ही मेरे मन में अलौकिक कार्य करने और अपूर्व शक्तियाँ पाने की उत्कट इच्छा रहती थी। मुझे मालूम था कि इस के लिए बड़े साहस की ज़रूरत होती है। कुछ दिन बाद मैंने एक बूढ़े से सुना कि एक ऐसा ग्रन्थ है जिसमें अपूर्व और अलौकिक कार्य करने के आसान तरीके बताए गए हैं। उसी बूढ़े से मुझे यह भी मालूम हुआ कि वह ग्रन्थ ऐन्द्रजालिक पर्वतों की किसी खोह में है।

अनेकों कष्ट उठा कर बड़े धीरज के साथ मैं किसी तरह उस खोह तक पहुँचा।

उस अँधेरी खोह में, जिसमें हवा बिलकुल नहीं चल सकती थी, मैं जान हथेली में लेकर कुछ दूर बढ़ा। इतने में मुझे सामने एक बड़ी रोशनी दिखाई दी। मैंने सोचा कि मेरी उम्मीद पूरी हुई और मेहनत सफल हुई। लड़खड़ाता किसी तरह वहाँ पहुँचा।

वहाँ जाने पर मुझे ऐसा लगा कि वह रोशनी काँच की एक वर्गाकार पेटी में से आ रही है। लेकिन ध्यान से देखने पर पता चला कि उसका कारण काँच की पेटी नहीं, बल्कि एक ग्रन्थ था जो उस पेटी में रखा था। मैंने उतावली से उस पेटी पर हाथ रख दिया।

उसी समय मैंने देखा कि एक काले बादल की सी डरावनी छाया उठ कर मेरी तरफ चली आ रही है। उसी से गड़गड़ाहट जैसी आवाज़ आई-"रे ! कौन है तू ! निकल जा बाहर !" यह सुन कर मैं बहुत डर गया। लेकिन किसी तरह धीरज धर कर बोला-"इस पेटी में जो ग्रन्थ है उसे लिए बिना मैं नहीं जा सकता।"

"अच्छा ! ऐसी बात है ?" मैंने सुना। तुरन्त बादल गड़गड़ाने लगे। बिजली चमकने लगी और मूसलधार वर्षा होने लगी।

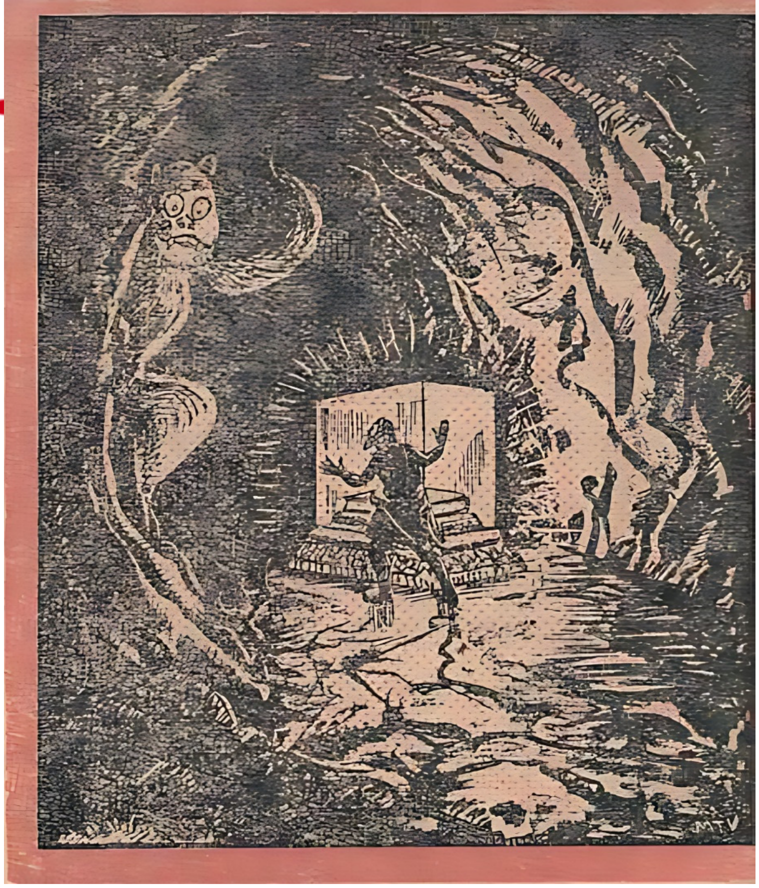

मैं डर के मारे काँपने लगा। बचपन में ही दुष्ट शक्तियों से रक्षा पाने के लिए मैंने एक योगी से एक मन्त्र सीखा था। अब उसे ज़ोर ज़ोर से याद करने लगा।

दस मिनट बाद बारिश थम गई। न वे बिजलियाँ रहीं, न बादलों की वह गड़गड़ाहट। मैंने आँखें बन्द कर भगवान का नाम लिया और उस काँच की पेटी पर जोर से एक मुक्का मारा। पेटी चूर-चूर हो गई। मैंने उस दिव्य-ग्रन्थ को दोनों हाथों से उठा कर कलेजे से लगा लिया और सिर पर पाँव रख कर भाग खड़ा हुआ। वह काली छाया कोसती हुई मेरा पीछा करने लगी-"तुम भाग कर जाओगे कहाँ? मैं न तुझे

दिन में काम करने दूँगा और न रात को आराम ! खबरदार !"

अन्त में हुआ भी वही। मैंने चार साल तक बड़ी लगन के साथ उस ग्रन्थ को शुरू से लेकर आखिर तक रट डाला। उससे मुझे कई अद्भुत शक्तियाँ प्राप्त हुई। लेकिन इसके लिए मुझे बड़ा मँहगा दाम देना पड़ा। मेरा स्वास्थ्य बिलकुल चौपट हो गया। मन में चैन न रहा। चौबीस घड़ी जीवन एक भयङ्कर नरक बन गया। यहाँतक कि जब अन्त में मुझसे न रहा गया तो मैं वह ग्रन्थ उठा ले गया और उस खोह में रख आया।

फिर भी मुझे चैन न मिला। वह काली छाया मेरा पीछा करती ही रही। जब मुझे कोई उपाय न सूझा तो मैंने उससे पूछा- 'मैं तो तुम्हारा ग्रन्थ वहीं रख आया। फिर मुझे क्यों सता रहे हो ?"

इस पर उस छाया ने विकट अट्टहास करके कहा-"तू ने उस किताब के ज़रिए बहुत सी शक्तियाँ पा ली हैं । उनके बल से तुम संसार का बहुत नुकसान कर सकते हो !" तब मैंने कहा-"मैं कसम खाकर कह सकता हूँ कि दूसरों की भलाई के लिए ही उन शक्तियों का उपयोग करूँगा। अपना कोई स्वार्थ नहीं साधूँगा।"

"अच्छा ! जब तक तू अपनी बात पर कायम रहेगा, तब तक मैं तेरा कुछ नहीं बिगाड़ूँगा।"

यह कह कर उस विकराल छाया ने मेरा पिण्ड छोड़ दिया। यही है मेरा रहस्य !"

सभा में सब लोग फुसफुसाने लगे। "दूसरों की भलाई के लिए इतना श्रम कोई क्यों करे ?" पण्डित लोगों ने एक दूसरे से कहा। "दूसरे राजाओं पर चढ़ाई करने और उनको जीतने में अगर इस ग्रन्थ का कोई उपयोग नहीं हो सकता तो यह हमारे लिए किस काम का ?" राजा लोग नाक-भौंह सिकोड़ने लग गए।

रङ्गीन चित्र - कथा चित्र — ५